प्रवचन-८१, श्लोक-१११, गाथा-८४, शुक्रवार, कार्तिक शुक्ल १३, दिनांक ०२-११-१९७९

नियमसार ८३ गाथा के पीछे कलश है न? कलश। समयसार का, १११ पहले।

अलमलमतिजल्पैर्दुर्विकल्पैरनल्पै–
रयमिह परमार्थश्चेत्यतां नित्यमेकः।
स्वरस–विसर–पूर्ण–ज्ञान–विस्फूर्तिमात्रा–
न्न खलु समयसारादुत्तरं किञ्चिदस्ति।।

समयसार का श्लोक है। आहाहा! '**[श्लोकार्थः—] अधिक कहने से...** क्या, आचार्य कहते हैं, तुम्हें क्या विशेष कहें? प्रभु! **तथा अधिक दुर्विकल्पों से...** क्या? अनेक प्रकार के विकल्प, वृत्तियाँ उठें, उनसे क्या? वे चीज़ (आत्मा) में है नहीं। **बस होओ,...** अनेक विकल्प जो दया, दान, व्रत, भक्ति, काम, क्रोध के हैं, उनसे बस होओ। वह राग है। भगवान उससे भिन्न है। **अलम** विकल्प से पृथक् होओ अब। और उससे छूटकर **बस होओ,...**

यहाँ इतना ही कहना है.. आहाहा! पूरा समयसार भगवान की दिव्यध्वनि में इतना कहना है **कि इस परम अर्थ का एक का...** आहाहा! परमपदार्थ भगवान आत्मा अतीन्द्रिय आनन्द और अतीन्द्रिय ज्ञान का पिण्ड प्रभु जो वस्तु है। जैसे बर्फ की.. क्या कहलाता है? शिला। बर्फ की शिला होती है न? मुम्बई में, नहीं? पचास-पचास मण की, शीतल-शीतल, पचास मण की शीतल (शिला होती है)। इसी प्रकार भगवान आत्मा शीतल.. शीतल.. अविकारी वीतरागस्वरूप की शिला है - पाट है। अरे रे! कैसे जँचे? आहा! अन्तरस्वरूप तो वीतरागस्वरूप का पाट आत्मा है।

कहते हैं **परम अर्थ का एक का...** परम पदार्थ आत्मा। आहाहा! दूसरी बात, विकल्पों की वृत्ति आदि छोड़ दे, भाई! उससे तुझे कुछ लाभ नहीं है। आहाहा! परम पदार्थ भगवान अन्दर सच्चिदानन्द—सत् ज्ञान और आनन्द से भरपूर प्रभु, उस **अर्थ का एक का ही निरन्तर अनुभवन करो;...** यह बात है, भाई! कठिन है। आनन्दस्वरूप भगवान आत्मा का अनुभव करो, वह धर्म और मोक्षमार्ग है। आहाहा! कठिन बात है।

अमृतचन्द्राचार्य समयसार की बहुत टीका कह गये हैं। (टीका) करते-करते

अन्त में ऐसा बोले, प्रभु! अब बस होओ, तेरी बात करते-करते। तेरी चीज़ अन्दर अतीन्द्रिय आनन्द और अतीन्द्रिय ज्ञान से भरपूर ध्रुवशिला अन्दर है, ऐसे का आत्मा का अन्तर अनुभव करो, उससे तुझे मोक्ष का मार्ग प्रगट होगा। आहाहा! यह सब व्यवहार का क्या समझना? व्यवहार आता है, वह राग है; वह धर्म नहीं है। आहाहा! शीतल चैतन्य पाट प्रभु, नित्य ध्रुव अविनाशी विषय है। सम्यग्दर्शन पर्याय का विषय अविनाशी पदार्थ आत्मा है। उसका एक का-एक का अन्तर्मुख होकर अनुभव करो, वह मोक्ष का मार्ग है। ऐसी बात है। यहाँ तो व्रत करो, अपवास करो, भक्ति करो, पूजा करो, यात्रा करो। यह शुभभाव बीच में आता है, परन्तु यह कोई धर्म नहीं है। आहाहा! वीतराग परमात्मा जो वीतरागस्वरूप था, तो उससे वीतरागस्वरूप हुआ; तो वीतरागस्वरूप आत्मा है। आहाहा! परमेश्वर भगवत्स्वरूप आत्मा, उस एक पदार्थ का ही अनुभव करो। बहुत संक्षिप्त बात की है।

मुमुक्षु : परन्तु काम बहुत है, करे कब?

पूज्य गुरुदेवश्री : कहाँ काम बहुत? व्यर्थ का हैरान होकर मर जाता है पूरे दिन। भभूतमलजी! काम बहुत स्टील का और लोहे के बेचने का। वह शान्तिलाल नहीं कहा था? शान्तिलाल खुशाल, दो अरब चालीस करोड़। पूरे दिन काम.. काम.. काम। एक-एक लाख का एक-एक छोटा जहाज था, ऐसे तीन सौ जहाज घर में थे। वह चुम्बक लोहा.. लोहा था। समुद्र कुछ सत्तर लाख की जमीन ली थी, उसमें अरबों रुपये का चुम्बक निकला, लोहा। वह एक गाँव से दूसरे पहुँचाने के लिए तीन सौ तो जहाज थे। एक-एक लाख के ऐसे तीन सौ (जहाज)। पूरे दिन होली सुलगती है। यह करो.. यह करो.. यहाँ भेजो, यहाँ करो। उसके पैसे निपटाना, इतने ऐसे लाना, और ऐसा रखना। आहाहा! अरे रे! मजदूरी के विकार के परिणाम से निवृत्त नहीं होता। यह सब संसार की मजदूरी है।

यहाँ तो आचार्य महाराज कहते हैं कि बहुत क्या कहें प्रभु, तुझे अब? बहुत कहा तुझे। अब उसका योगफल यह है कि एक **परम अर्थ...** परमपदार्थ भगवान द्रव्यवस्तु, चैतन्य द्रव्यस्वभाव, शुद्ध मूर्ति प्रभु, **एक का ही...** एक का ही (कहकर) एकान्त किया है। व्यवहार भी करो और यह भी करो, ऐसा नहीं कहा। आहाहा! यह भगवान आत्मा अन्दर आनन्दस्वरूप चिन्तामणि रत्न प्रभु, नित्यानन्द चिन्तामणि नित्य वस्तु, ऐसा एक परमपदार्थ आत्मा, उसका एक का ही अन्तर अनुसरण कर अनुभव करो। आहाहा! यह

बारह अंग का सार है। वीतराग त्रिलोकनाथ परमात्मा की वाणी में परमार्थ का यह स्वरूप है। निवृत्त कब होना? ऐसा रामजीभाई कहते हैं। आहाहा!

अरे! बहुत किया, भाई! पाव घण्टे में, (१५ मिनिट में) उड़ गया अभी एक, लो! यह प्रेमचन्दभाई की बहू। राणपुर 'प्रेमचन्दभाई मगन' नहीं थे? १५ मिनिट, एक घण्टे दु:ख आया जरा। (बाकी) कुछ नहीं होता। दो दिन पहले। एक लड़के का पत्र आया है। मुम्बई से सब आये हैं। जरा दर्द उठा तो एक घण्टे में तो समाप्त हो गया। देह छूट गयी। घण्टे भर पहले कुछ नहीं था परन्तु देह को छूटने का तो एक समय है न, बापू! आहाहा! उसकी स्थिति पूरी हुई, इसलिए एक समय में एकदम देह छूट जाएगी। तेरे लाख डॉक्टर आवे और इन्द्र उतरे तो भी एक समय अधिक बढ़े, ऐसा नहीं है। आहाहा! आज लड़के का-महासुख का पत्र आया है। आहाहा!

यहाँ कहते हैं, परमात्मा, सन्त कहते हैं, वह परमात्मा के आढ़तिया हैं। वे कहते हैं, प्रभु! तेरी कितनी बात करें? नाथ! तुझे क्या कहना प्रभु अब? एक परमपदार्थ ऐसा आत्मा द्रव्यस्वभाव... आहाहा! उसका अनुभव करना। उसमें तुझे आनन्द आयेगा, तुझे शान्ति मिलेगी, तुझे वीतरागता होगी। आहाहा! यह सब व्यवहार और फ्यवहार सब गया कहाँ तब? भभूतमलजी! आठ लाख का मन्दिर बनाया।

भरत ने करोड़ों रुपये के बनाये। तीन काल के तीर्थंकरों के (मन्दिर) बनाये। उसमें है, परमागम में है। यहाँ है? तीन काल के तीर्थंकरों के तीन चौबीसी के मन्दिर बनाये। परन्तु वह तो परमाणु की पर्याय उस काल में वहाँ होनेवाली है। करनेवाले के भाव में भाव हो तो शुभ है, पुण्य है। आहाहा! वह कोई धर्म नहीं, वह कोई धर्म का कारण भी नहीं। वह शुभभाव धर्म में सहायक हो, ऐसा नहीं है। आहाहा!

परमपदार्थ ऐसा जो आत्मा अन्दर भगवान है, उसका प्रभु! तू अनुभव कर। है? **परम अर्थ का एक का ही निरन्तर अनुभवन करो;...** आहाहा! सार है। अब यह तो स्त्री, पुत्र को पालना कब? उन्हें बचाना.. आहाहा! आज एक व्यक्तिगत गुप्त पत्र आया है। बहुत दु:खी हूँ, बहुत ऐसा हूँ... ऐसा हूँ.. अब कोई साधन नहीं है। आठ-दस वर्ष चलाया, अब तो देह छूटने का अवसर आया है। हमारे से माँगता है। हमारे पास क्या है? आहाहा! मैं

वहाँ आऊँ तो कुछ पैसा दे तो फैक्ट्री करूँ, धन्धा चलाऊँ। आहाहा! अरे! प्रभु! यहाँ तो शुभविकल्प है, वह भी बन्ध का कारण है। आहाहा!

क्या कहते हैं? कि समयसार सिद्धान्त का सार यह है कि एक आत्मा का निरन्तर.. **एक का ही...** एक का ही। एकरूप स्वरूप भगवान पूर्ण आनन्द, **एक का ही...** निश्चय कहा। आहाहा! अनुभव करो। **क्योंकि निज रस के विस्तार से पूर्ण जो ज्ञान...** आहाहा! इस राग के रस से भिन्न रस के फैलाव (स्वरूप), ऐसा जो पूर्ण ज्ञान, आनन्द पूर्ण स्वरूप भगवान, **उसके स्फुरायमान होनेमात्र...** आहाहा! अन्तर पूर्णानन्द का नाथ, उसमें अन्तर अनुभव करने से परमात्मा पर्याय में स्फुरायमान होता है। आहाहा! पर्याय में परमात्मा होता है। द्रव्य में परमात्मा है, वस्तु (स्वरूप से) तू परमात्मा है, प्रभु! आहाहा! अन्दर सब आत्मा भगवान हैं। उस भगवान का अर्थ एकाग्र हो तो तुझे भगवानपना पर्याय में प्रगट होगा। पर्याय में प्रगट होगा। आहाहा! ऐसा सब। ऐसी बातें, लो! यह व्यवहार-फ्यवहार क्या करना? लोग व्यवहार का बहुत पक्ष करते थे। आज कान्तिभाई का पत्र आया है। कान्तिभाई ईश्वर का। बहुत सरस बात है। वह पहले विरोध करता था। समाचार-पत्र में विरोध (करे) अज्ञानी ऐसा करता है और अज्ञानी ऐसा करता है, ऐसा लिखता था। और आज ऐसा आया। यहाँ थोड़े दिन रह गया न? कान्तिलाल ईश्वर। आहाहा! बात तो ऐसी सत्य है। बराबर है, वही बात है। भाई! मार्ग तो यह है, धीमे से कहो, उतावल से कहो, बड़ी आवाज में कहो, चाहे जिस प्रकार से दृष्टान्त देकर कहे परन्तु वस्तु तो यह प्रभु अन्दर पूरा विराजता है। एक का ही अनुभव करना, यह इसका सार है। अब ऐसा समय कब मिले इसमें? ऐई! इस लोहे के व्यापार के कारण तुम्हें समय कहाँ है? लोहे का है? या पत्थर का है? टाईल्स.. टाईल्स का। आहाहा!

मुमुक्षु : छह खण्ड का राज चलावे इसे....

पूज्य गुरुदेवश्री : छह खण्ड का राज कौन चलावे? प्रभु! क्या कहें? यह परमाणु की पर्याय उस-उस काल में उसके कारण से वह परिणमित होती है। अज्ञानी उसका कर्ता होकर अभिमान में मिथ्यात्व सेवन करता है। आहाहा! ऐसी बातें हैं, भाई!

हमारे भाई को हमने कहा था न? हमने कहा नहीं? हमारा भागीदार फुई (बुआ) का लड़का कुँवरजीभाई दुकान में (हिस्सेदार था)। दुकान तो अभी चलती है। उनकी

बुद्धि कम थी परन्तु कुछ पुण्य था, इसलिए दुकान चलती है। वे गुजर गये, तब थोड़ी आमदनी थी, दो लाख की। अभी बढ़ गयी है। दो लाख की आमदनी थी, दस लाख रुपये थे। सब था। इसलिए उन्हें तो मैंने किया... मैंने किया.. मैंने किया यह सब, ऐसा अभिमान (था)। आहाहा! वे तो इतना बोले... इतना बोले.. इसका ऐसा करना.. इसका ऐसा करना.. इसका ऐसा करना.. इस प्रकार दुकान चले। बहुतों की दुकान टूट गयी। हम काम करते हैं तो दुकान चलती है। भाई! तुम यह रहने दो बापू! कहा। (संवत्) १९६६ की बात है। बीस वर्ष की उम्र। सत्तर वर्ष पहले की बात है। भाई! तुम यह क्या करते हो? बापू! दुकान तो मैं भी चलाता हूँ परन्तु इतना अभिमान तुम्हें! भाई! क्या कहूँ? मुझसे चार वर्ष बड़े थे।

अभी मुझे शरीर के नब्बे (वर्ष) चलते हैं। जन्म के। गर्भ के ९१। उन्हें ९५ वर्ष, बड़े थे। सुनते थे। भगत है.. भगत है.. यह भगत है। बोलने दो, बोलने दो। मेरे सामने कोई बोले नहीं। भाई! क्या कहूँ? मुझे तो ऐसा लगता है, भाई! मरकर तुम देव तो नहीं होओगे, नरक में तो नहीं जाओगे। अपने तो कुछ माँस, अण्डा खाते नहीं, इसलिए नरक में नहीं जाओगे, भाई! सत्तर वर्ष पहले की बात है। बीस वर्ष की उम्र थी। (संवत्) १९४६ में जन्म और १९६६ की बात है यह। दुकान में शामिल जीमते थे। उनकी बहुत ममता देखकर एक दिन मुझसे बोला गया, यह क्या करते हो पूरे दिन तुम? याद रखो, कहा, मरकर तुम नरक में तो नहीं जाओगे देव के लिए तुम्हारी योग्यता नहीं है, मनुष्यपने की योग्यता नहीं है। भाई! मैं कहूँ तो मरकर ढोर में जानेवाले हो। दुकान में बैठे थे, गद्दी पर बैठे थे, बोले नहीं, हँसने लगे। भगत है। भगत बोले वह सुनो। भाई! यह क्या करते हो? पूरे दिन तुम... कहाँ जाना है? बापू! यह जिन्दगी तो पूरी हो जाएगी। जितना आयुष्य है, वहाँ तक है। अब कहाँ जाओगे? बापू! आहाहा! भविष्य में अनन्त काल रहना है, नाथ! तेरा कुछ नाश हो, ऐसा है? भविष्य तो अनन्त काल रहेगा तो कहाँ रहेगा? प्रभु! ऐसी दृष्टि और यह करूँ.. करते-करते ऐसी बुद्धि में रहेगा। भविष्य में मिथ्यात्व के दुःख में अनन्त काल व्यतीत करना पड़ेगा, प्रभु! आहाहा! परन्तु लोगों को वर्तमान की मिठास के कारण.. सब सुविधा देखे, पैसे की, इज्जत की, दुकान की, अमुक की, नौकरों की, नौकर भी ऐसे अच्छे मिले, सब मानो ऐसा। ओहो! परन्तु क्या है?

यहाँ कहते हैं, करना हो तो प्रभु! एक यह है। यह आत्मा अन्दर चिदानन्द प्रभु ध्रुव

नित्यानन्द प्रभु परमपदार्थ अन्दर वस्तु है। एक का ही अनुभव करनेयोग्य है। आहाहा! दूसरा क्या कहें? कहते हैं, आहाहा! तुझे क्या कहें? भाई! तुझे ठीक नहीं लगता। बाहर के रस के रसिक को यह बात ठीक नहीं लगती। प्रभु! ठीक न लगे तो भी बात तो यह है। आहाहा! अरे रे! यहाँ कहाँ जाना है? क्षण में देह उड़ जाती है। आहाहा! देखो न, कल आया है न? आणंदभाई के बहनोई। आठ दिन में दो बार तो यह आया... क्या कहलाता है? हार्टअटैक। आणंदभाई हैं। नानालालभाई करोड़पति, नानालाल करोड़पति, आणंदभाई अभी थे न? उनके बहनोई। आठ दिन में दो बार अटैक आया। साठ वर्ष की उम्र। लड़के का पत्र आया, भाई! तुम आओ। ऊपर रक्त चढ़ गया है, बोलना बन्द हो गया है। परमाणु की भाषा जड़ है, बापू! वह कब बन्द हो और कब चले, यह तो तेरे आधार से नहीं है। आहाहा! यह शरीर भी कब चले और कब स्थिर हो, वह भी तेरे आधार से नहीं है। अरे रे! तो फिर शरीर और वाणी भी तेरे आधार से नहीं है तो इस जगत की बाहर की चीज़ें चलें, रहें और टिकें, प्रभु! तेरी भ्रमणा है। आहाहा! एक बार परम अर्थ का.. ऐसी गाथा है।

परम अर्थ का एक का ही निरन्तर अनुभवन करो; क्योंकि निज रस के विस्तार से पूर्ण.... प्रभु भरा है। अतीन्द्रिय आनन्द और ज्ञान के पूर्ण रस से (भरा है)। आहाहा! जैसे कोठी में अनाज भरा हो, ऐसा नहीं, परन्तु जैसे शक्कर में मिठास भरी है; वैसे इस भगवान में अतीन्द्रिय आनन्द और अतीन्द्रिय ज्ञान पूर्ण भरा है। आहाहा! ऐसा जो भगवान, उसके **विस्तार से पूर्ण जो ज्ञान उसके स्फुरायमान होनेमात्र...** आहाहा! उस चैतन्य भगवान की एकाग्रता से, जो ज्ञान और आनन्द की दशा स्फुरित हो... आहाहा! वह **समयसार (-परमात्मा) उससे ऊँचा वास्तव में अन्य कुछ भी नहीं है...** वह परमात्मा है और परमात्मा की एकाग्रता से पर्याय में परमात्मा बनते हैं, इसके अतिरिक्त कोई उत्कृष्ट चीज़ जगत में नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु : उत्कृष्ट होवे तो कुछ हल्की है, ऐसा कैसे....

पूज्य गुरुदेवश्री : सब हल्की क्या? उल्टा है। अरे रे! ऐसी बातें हैं। दुनिया को निवृत्ति नहीं मिलती। निर्णय करने का समय नहीं मिलता। आहाहा! यह तो क्या है? द्रव्य, जिसे आत्मा कहें, वह आत्मा क्या चीज़ है? उसमें क्या भरा है? वह नित्य है या अनित्य है? विकृत है या अविकृत है? क्या है वह चीज़? क्या है? आहाहा!

मुमुक्षु : विकल्प हमारी भाषा में शब्द ही प्रयोग नहीं होता।

पूज्य गुरुदेवश्री : बापू! क्या करें? प्रभु! आहाहा! यहाँ यही कहते हैं?

एक **स्फुरायमान होनेमात्र जो समयसार (-परमात्मा)...** आहाहा! वस्तु स्वयं परमात्मा है। अरे रे! कैसे जँचे? दो बीड़ी पीवे वहाँ इसे तलब चढ़ जाए तो अन्दर ऐसे.. आहाहा! बीड़ी पीवे। पाखाने में दस्त के लिए जाए, तब दो बीड़ी पीवे, तब दस्त उतरे। अब आत्मा के ऐसे अपलक्षण। उसे ऐसा कहे कि तू परमात्मा है, प्रभु! आहाहा! तुझे तो परद्रव्य के बिना चले, ऐसी तेरी चीज़ है। आहाहा! परद्रव्य के सहारे से तेरा टिकना हो, ऐसी तू चीज़ है नहीं। आहाहा! ऐसा जो भगवान आत्मा, वह **स्फुरायमान होनेमात्र जो समयसार (-परमात्मा) उससे ऊँचा वास्तव में अन्य कुछ भी नहीं है...** उससे उत्कृष्ट दुनिया में कोई इन्द्रासन और सर्वार्थसिद्धि के देव, (ये कुछ भी) उससे उत्कृष्ट चीज़ नहीं है। आहाहा! **(-समयसार के अतिरिक्त अन्य कुछ भी सारभूत नहीं है)।** आहाहा!

और (इस ८३वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं):— यह अमृतचन्द्राचार्य का श्लोक है और यह श्लोक अब पद्मप्रभमलधारिदेव टीकाकार का श्लोक है, १११।

श्लोक-१११

और (इस ८३वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं):—

(आर्या)

अति-तीव्र-मोह-सम्भव-पूर्वार्जितं तत्प्रतिक्रम्य।
आत्मनि सद्बोधात्मनि नित्यं वर्तेऽहमात्मना तस्मिन्।।१११।।

(हरिगीतिका)

अतितीव्र मोहोत्पत्ति से पहले उपार्जित कर्म का।
प्रतिक्रमण कर इस ज्ञानमय नित आत्मा में वर्तता॥१११॥

[श्लोकार्थः—] अति तीव्र मोह की उत्पत्ति से जो पूर्व में उपार्जित (कर्म)

उसका प्रतिक्रमण करके, मैं सद्बोधात्मक (सम्यग्ज्ञानस्वरूप) ऐसे उस आत्मा में आत्मा से नित्य वर्तता हूँ॥१११॥

श्लोक-१११ पर प्रवचन

अति-तीव्र-मोह-सम्भव-पूर्वार्जितं तत्प्रतिक्रम्य।
आत्मनि सद्बोधात्मनि नित्यं वर्तेऽहमात्मना तस्मिन्॥१११॥

आहाहा! **अति तीव्र मोह की उत्पत्ति से...** आहाहा! पर की ओर के **अति तीव्र मोह की उत्पत्ति से जो पूर्व में उपार्जित (कर्म)...** आहाहा! अपने शुद्ध निजस्वरूप भगवत् स्वरूप को भूलकर परसन्मुख का तीव्र उत्साह और तीव्र मोह के कारण जो कुछ कर्म उत्पन्न हुए, **उसका प्रतिक्रमण करके,...** प्रभु! अब प्रतिक्रमण कर। वहाँ से अब विमुख हो जा, अब विमुख हो, ऐसा कहते हैं। वह प्रतिक्रमण यह। वहाँ से हट जा। विकल्प से, पुण्य-पाप से हट जा। हट, बस! आहाहा!

एक क्षुल्लक थे, यहाँ आते थे। बेचारे गुजर गये। भीलवाड़ा के थे। क्या नाम? आदिसागर क्षुल्लक थे। बुद्धि थोड़ी थी, परन्तु यहाँ की बात उन्हें बहुत सुहाती-रुचती थी। फिर दूसरों को ऐसा कहते थे 'पर से खस, आत्मा में बस, इतना तेरे लिए बस।' आहाहा! पर से हट। राग से हट जा, स्वभाव में बस, इतना तेरे लिए बस। बस। ऐई! बेचारे की बुद्धि कम थी तो ऐसा एक संक्षिप्त में लोगों को कहते थे। बहुत बार यहाँ आते थे। वहाँ रखियाल भी आते थे।

भगवान पूर्णानन्द का नाथ है, वह बाहर के विकल्प में गया है, उसमें से हट जा, हट जा और स्व में बस। ज्ञानानन्द प्रभु में बस, तुझे प्रतिक्रमण होगा, तुझे आनन्द होगा। आहाहा! पर में रहने से तुझे दुःख होगा। पुण्य और पाप के विकल्प में रहने से तो तुझे दुःख होगा। वहाँ से हटकर भगवान ज्ञानस्वरूप में पर से हटकर प्रतिक्रमण करके... है? **मैं सद्बोधात्मक...** सद्बोधात्मक **(सम्यग्ज्ञानस्वरूप) ऐसे उस आत्मा...** ज्ञानस्वरूप, जाननस्वरूप है वह तो। आहाहा! जानन अर्थात् शास्त्र का जानना, वह ज्ञान नहीं। जानन उसका (आत्मा का) स्वभाव है। जिसकी सत्ता में यह ज्ञात होता है। यह.. यह.. यह.. यह.. यह.. यह.. यह तो उसकी सत्ता में ज्ञात होता है। जड़ की सत्ता में ज्ञात होता है?

चैतन्यसत्ता, सद्बोध ज्ञानस्वरूप की सत्ता में वह ज्ञात होता है। निश्चय से वह ज्ञात नहीं होता। निश्चय से तो उस ओर का अपना ज्ञान अपने में ज्ञात होता है। आहाहा! यह सब दिखता है। आँख इतनी, दिखे कितना? अन्दर ज्ञान की पर्याय में, ज्ञान की सत्ता के अस्तित्व में यह सब ही यह है, ऐसा जाननेवाला तत्त्व है, वह पर्यायतत्त्व है। पर्यायतत्त्व इतना है कि जिसमें यह जानता वह अपनी पर्याय है। उसे जानना अर्थात् उसकी पर्याय है, ऐसा नहीं। आहाहा! उस पर्याय में अन्तर आत्मा भगवान पूर्ण आनन्द पड़ा है, उसका तू लक्ष्य कर। आहाहा! स्फुरायमान होने से सद्बोधात्मक.. वह सद्ज्ञान बोधस्वरूप है। आहाहा!

ज्ञानरूपी चन्द्र, चन्द्र के प्रकाश का पुंज प्रभु! ज्ञान के प्रकाश का पुंज ध्रुव, ऐसा सद्बोधात्मक स्वरूप, **ऐसे उस आत्मा में आत्मा से नित्य वर्तता हूँ।** आत्मा में आत्मा से अर्थात् क्या कहा? मेरा त्रिकाल शुद्धस्वभाव जो है, उसकी पर्याय में, स्वभाव से मैं पर्याय में वर्तता हूँ। शुद्धपर्याय से शुद्ध स्वभाव में मैं वर्तता हूँ। राग से मेरी चीज़ मैं वर्तता हूँ, ऐसा नहीं हो सकता। आहाहा! अपना स्वभाव जो ज्ञान और आनन्द है, उसकी पर्याय में जो स्वभाव उत्पन्न हुआ, उस स्वभाव से मैं अन्तर में वर्तता हूँ। आहाहा! ऐसा कठिन पड़ता है इसलिए... पूरे दिन वह सुना हो कि ऐसा करना... ऐसा करना... और ऐसा करना। बड़ा गजरथ निकालना, रथयात्रा निकालना, कोई फिर पाँच, दस ब्रह्मचर्य ले तो उनकी रथयात्रा निकाले, उनके गुणगान करे कि ओहो! लोग मानो... आहाहा! अरे! प्रभु! ऐसी बातें तो अनन्त बार की है। सुन न! आहाहा!

सद्बोधात्मक (सम्यग्ज्ञानस्वरूप) ऐसे उस आत्मा में... सद्बोधस्वरूप, सच्चिदानन्द प्रभु ऐसा सद्बोधस्वरूप आत्मा **ऐसे उस आत्मा में आत्मा से...** स्वभाव की निर्मलता से पूर्ण निर्मलता में **नित्य वर्तता हूँ।** इसका नाम सच्चा प्रतिक्रमण कहने में आता है। अरे रे! अब ऐसी बातें। फिर बहुत से कहते हैं, सोनगढ़ का निश्चय.. निश्चय.. निश्चय.. व्यवहार का तो ना ही। अरे! परन्तु सुन न, प्रभु! निश्चय अर्थात् सत्य। व्यवहार अर्थात् आरोपित बात, वह तो कथन है। परम सत्य उसका नाम निश्चय। आहा! परमानन्द का नाथ भगवान अन्दर.. आहाहा! उसे आत्मा में निज रस से, निजस्वभाव से वर्तता हूँ। उसका नाम निश्चयप्रतिक्रमण और सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र कहा जाता है। यह ८३ गाथा हुई। ८४ गाथा।

गाथा-८४

आराहणाइ वट्टइ मोत्तूण विराहणं विसेसेण।
सो पडिकमणं उच्चइ पडिकमणमओ हवे जम्हा।।८४।।

आराधनायां वर्तते मुक्त्वा विराधनं विशेषेण।
स प्रतिक्रमणमुच्यते प्रतिक्रमणमयो भवेद्यस्मात्।।८४।।

अत्रात्माराधनायां वर्तमानस्य जन्तोरेव प्रतिक्रमणस्वरूपमुक्तम्। यस्तु परमतत्त्वज्ञानी जीवः निरन्तराभिमुखतया ह्यत्रुट्यत्परिणामसन्तत्या साक्षात् स्वभावस्थितावात्माराधनायां वर्तते अयं निरपराधः। विगतात्मराधनः सापराधः, अत एव निरवशेषेण विराधनं मुक्त्वा...।

विगतो राधो यस्य परिणामस्य स विराधनः। यस्मान्निश्चयप्रतिक्रमणमयः स जीवस्तत एव प्रतिक्रमणस्वरूप इत्युच्यते।

तथा चोक्तं समयसारे ह्न

संसिद्धिराधसिद्धं साधियमाराधियं च एयट्ठं।
अवगयराधो जो खलु चेया सो होइ अवराधो।।३९।।[१]

छोड़े समस्त विराधना आराधनारत जो रहे।
प्रतिक्रमणमयता हेतु से प्रतिक्रमण उसको ही कहें॥८४॥

अन्वयार्थः—[विराधनं] जो (जीव) विराधन को [विशेषेण] विशेषतः [मुक्त्वा] छोड़कर [आराधनायां] आराधना में [वर्तते] वर्तता है, [सः] वह (जीव) [प्रतिक्रमणम्] प्रतिक्रमण [उच्यते] कहलाता है, [यस्मात्] कारण कि वह [प्रतिक्रमणमयः भवेत्] प्रतिक्रमणमय है।

टीकाः—यहाँ आत्मा की आराधना में वर्तते हुए जीव को ही प्रतिक्रमणस्वरूप कहा है।

---

* राध=आराधना; प्रसन्नता; कृपा; सिद्धि; पूर्णता; सिद्ध करना वह; पूर्ण करना वह।

जो परमतत्त्वज्ञानी जीव निरन्तर अभिमुखरूप से (-आत्मसंमुखरूप से) अटूट (-धारावाही) परिणामसंतति द्वारा साक्षात् स्वभावस्थिति में—आत्मा की आराधना में—वर्तता है, वह निरपराध है। जो आत्मा के आराधन रहित है, वह सापराध है; इसीलिए निरवशेषरूप से विराधन छोड़कर—ऐसा कहा है। जो परिणाम 'विगतराध' अर्थात् *राध रहित है, वह विराधन है। वह (विराधनरहित—निरपराध) जीव निश्चयप्रतिक्रमणमय है, इसीलिए उसे प्रतिक्रमणस्वरूप कहा जाता है।

इसी प्रकार (श्रीमद् भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यदेवप्रणीत) श्री समयसार में (३०४ वीं गाथा द्वारा) कहा है कि:—

(हरिगीतिका)

संसिद्धि, साधित, सिद्ध, आराधित सभी एकार्थ हैं।
अपराध अथवा राध बिन जो जीव वह अपराध है॥

[गाथार्थः—] संसिद्धि, राध, सिद्ध, साधित और आराधित—यह शब्द एकार्थ हैं; जो आत्मा 'अपगतराध' अर्थात् राध से रहित है, वह आत्मा अपराध है।

गाथा-८४ पर प्रवचन

आराहणाइ वट्टइ मोत्तूण विराहणं विसेसेण।
सो पडिकमणं उच्चइ पडिकमणमओ हवे जम्हा।।८४।।

छोड़े समस्त विराधना आराधनारत जो रहे।
प्रतिक्रमणमयता हेतु से प्रतिक्रमण उसको ही कहें॥८४॥

टीका:—यहाँ आत्मा की आराधना में वर्तते हुए... आत्मा आनन्दस्वरूप प्रभु, ज्ञान का पिण्ड आत्मा, उसके सन्मुख होकर आराधना में वर्तते हुए, उसकी सेवना में वर्तते हुए। आहाहा। सेव्य-सेवक। सेवक मैं और भगवान आत्मा सेव्य है, यह भी जिसमें नहीं है। आहाहा! मैं सेव्य और सेवक भी मैं। सेव्य अर्थात् परमात्मस्वरूप, वह मेरा सेवनयोग्य है और मेरी वर्तमान निर्मल पर्याय से वह सेवनयोग्य है। आहाहा!

यहाँ आत्मा की आराधना में वर्तते हुए जीव को ही प्रतिक्रमणस्वरूप कहा है। उसने प्रतिक्रमण किया है। आहाहा! भगवान आनन्दस्वरूप की आराधना में रहता है, अन्तर

की सेवा में (रहता है), उसे ही निश्चय प्रतिक्रमण कहते हैं। आहाहा! भाषा से प्रतिक्रमण बोले, अन्दर विकल्प उठे, वह प्रतिक्रमण नहीं है। आहाहा! सूक्ष्म बात है, प्रभु! आहाहा!

सर्प है, वह साँडसे से पकड़ा जाता है। साँडसा समझते हो? सर्प होता है न सर्प? साँडसा को क्या कहते हैं? लकड़ी का। शुकनलाल गये? भावनगर। साँडसा कहते हैं न? उस साँडसे से सर्प पकड़ में आता है। परन्तु साँडसा से मोती पकड़ में आता है? यह महिलाएँ मोती जड़ती हैं न? साँडसे से पकड़कर मोती रखे जाते हैं? बारीक साँडसी चाहिए। लोहे की बारीक (साँडसी) और या हाथ (चाहिए)।

इसी प्रकार भगवान को पकड़ने के लिए... आहाहा! पुण्य और पाप स्थूल-स्थूल, मोटी चीज़, उससे वह पकड़ में नहीं आता। आहाहा! समझ में आया? पुण्य-पाप के अधिकार में (लिया है), अतिस्थूल संक्लेश परिणाम और अतिस्थूल विशुद्ध परिणाम। शुभभाव को अतिस्थूल विशुद्ध परिणाम कहा है। शुभभाव। आहाहा! भगवान तो विशुद्ध और शुभ-अशुभभाव से रहित, निजस्वयरूप की आराधना में वर्तता है, वह निश्चयप्रतिक्रमण है। आहाहा! परन्तु उसका कुछ साधन होगा? या सीधे वह होगा? सीधे कोई साधन-बाधन (है या नहीं)? साधन यह, राग से भिन्न करके प्रज्ञाछैनी मारना, वह साधन है। आहाहा!

समयसार में आगे आता है। प्रज्ञाछैनी। जैसे छैनी मारकर लोहे के टुकड़े करते हैं न? छैनी मारे (तो) दो टुकड़े हो जाते हैं। इसी प्रकार भगवान आत्मा और पुण्य-पाप के, दया, दान के विकल्प-राग, दोनों के बीच भेदज्ञान की छैनी मारे तो दोनों भिन्न पड़ जाते हैं। दोनों भिन्न तो हैं ही। दोनों के बीच साँध है। राग और स्वभाव के बीच दरार है, तड़। तड़ समझते हो? साँध, दरार। आहाहा! यह पत्थर होता है न? लाखों मण पत्थर (हो), उसमें छोटी रग होती है। बारीक-बारीक लाल डोरी, सफेद रग होती है, वहाँ अन्दर सुरंग मारे तो लाखों मण का पत्थर निकल जाता है। क्योंकि एक दूसरे के बीच में संधि है, वहाँ मारते हैं। इसी प्रकार भगवान चैतन्यस्वरूप प्रभु और पुण्य-पाप का राग, दो के बीच साँध और दरार है। आहाहा! अब ऐसी बातें।

यहाँ परमात्मा ऐसा फरमाते हैं, सन्त उनकी बात परमात्मा की ओर से कहते हैं। **आत्मा की आराधना में वर्तते हुए...** देखा? वर्तते हुए पुरुषार्थ से। स्वभाव में अन्तर में

पुरुषार्थ से शान्ति और आनन्द की दशा में वर्तते हुए। अन्तरस्वरूप निर्मल प्रभु में पर्याय में निर्मलता से वर्तते हुए। आहाहा! **जीव को ही प्रतिक्रमणस्वरूप कहा है।** वह जीव ही प्रतिक्रमणस्वरूप है। राग से भिन्न होकर अपने स्वरूप का अनुभव करे, वही प्रतिक्रमणस्वरूप जीव है। देखो! आये लगते हैं दोनों। शुकनलालजी आये न? शशीभाई आये हैं। समझ में आया? आहाहा! क्या कहा?

आत्मा की आराधना में वर्तते हुए जीव को ही प्रतिक्रमणस्वरूप कहा है। जीव को प्रतिक्रमणस्वरूप कहा है। कोई विकल्प और राग, वह प्रतिक्रमणस्वरूप नहीं है। आहाहा! अरे रे! ऐसी बातें सुनने को नहीं मिलती और सुनने को मिले तो (ऐसा कहे), यह तो निश्चय है.. निश्चय है.. ऐसा करके निकाल डाले। प्रभु! तेरे स्वभाव का अनादर कर दिया। आहाहा! भाई! दूसरा कोई पन्थ नहीं है। तेरी चीज़ का आदर सत्कार और सेवन के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है। कोई दया, दान, व्रत आदि के परिणाम तो संसार है, राग है। वहाँ शरीर को संसार कहा है न? समाधिशतक में आया था। यह शरीर, वह संसार है, वह तो जड़ है। वह तो आत्मा की पर्याय में नहीं है। शरीर (तो) आत्मा की पर्याय में नहीं है, भिन्न है, परन्तु आत्मा की पर्याय में पुण्य और पाप तथा वे मेरे-ऐसा मिथ्यात्व, इसकी पर्याय में है, वह संसार है। आहाहा!

यह आत्मा जो त्रिकाली द्रव्य है और त्रिकाली गुण, उसमें तो वर्तमान पर्याय भी नहीं है। उस पर्याय में परद्रव्य नहीं। उस पर्याय में अहंकार, पर का राग और द्वेष और मिथ्यात्व का अहंकार, वह पर्याय में है परन्तु वह द्रव्य-गुण में नहीं है। कहते हैं कि तुझे प्रतिक्रमण करना हो तो उनसे हटकर स्वभाव की आराधना कर। वह जीवमय आराधना है, वह जीवमय प्रतिक्रमण है। आहाहा! अन्दर विकल्प उठे, वह प्रतिक्रमण नहीं है। ऐसी बात है। आहाहा! अरे रे! मुश्किल से अनन्त काल में (मनुष्यपना मिला), उसमें करना तो यह है। आहाहा! जो मूल चीज़ है, वह करना रह गयी और जो नहीं करना है, वह करके भटक मरा है। कोई धणीधोरी नहीं है। आहाहा! हार्ट की पीड़ा देखी है। हमने देखी है।

(संवत्) १९७६ के वर्ष की बात है। १९७६ के वर्ष। 'ध्रांगध्रा' थे। इसके बाद उसे बहुत पीड़ा हुई, इसलिए (कहा)। महाराज को बुलाओ। मांगलिक सुनाने के लिए (बुलाओ) उपाश्रय के साथ में 'ध्रांगध्रा' ७६ के वर्ष की बात है। उसे पलंग पर तो सुलावे

नहीं परन्तु नीचे सोवे वहाँ रह सके नहीं, इतनी पीड़ा। नीचे तड़फड़ाहट किया करे। मांगलिक सुनने का समय मिले नहीं। इतनी पीड़ा थी। कोई संघवी था। विसाश्रीमाली। उपाश्रय है न? 'ध्रांगध्रा' में उसका साथ में मकान है। सूरचन्द संघवी रहता था। आहाहा! कपड़े की बड़ी दुकान थी। वह भी था। परन्तु उसकी पीड़ा.. नीचे शैय्या में बैठ तो सके नहीं, सो सके नहीं। आहाहा! प्रभु! उसकी पीड़ा कितनी होगी? आहाहा! ऐसी पीड़ाएँ प्रभु! तूने अनन्त बार सहन की है। आहाहा! भाई! तेरा आत्मतत्त्व आराधनेयोग्य है, सेवनयोग्य है। आहाहा! उसकी प्रसन्नता प्राप्त करनेयोग्य है। वह प्रसन्न होवे, तब वीतरागता होती है। आहाहा! राग की प्रसन्नता होवे तो उसमें दुःख होता है। जगत से उल्टा तो है, भाई! आहाहा!

ऐसे तो बहुत देखे हैं। 'वढ़वाण' में (संवत्) १९८२ के वर्ष में एक था। वे.. आहाहा! वह शरीर की पीड़ा है, वह आत्मा की पर्याय में नहीं है। क्या कहा? शरीर की जो पीड़ा है, वह तो जड़ की अवस्था है। वह आत्मा की पर्याय में नहीं है। आत्मा की पर्याय और देह के रोग की पर्याय दोनों अत्यन्त भिन्न हैं परन्तु अज्ञानी की बुद्धि वहाँ है, वह मुझे ऐसा होता है... मुझे ऐसा होता है, (ऐसा मानता है)। इस ओर की नजर नहीं, इसलिए मुझे ऐसा होता है, ऐसा करके मिथ्यात्व में दुःख का सेवन करता है। आहाहा!

यह यहाँ कहते हैं। प्रभु! तू जीव को ही प्रतिक्रमणस्वरूप जान। आहाहा! **जो परमतत्त्वज्ञानी जीव...** परमतत्त्व ऐसा जो भगवान आत्मा, अकेला अतीन्द्रिय आनन्द और अतीन्द्रिय ज्ञान का दल, ऐसा जो परमतत्त्व, उसका जिसे ज्ञान हुआ... आहाहा! दूसरा ज्ञान एक ओर रखो, कहते हैं। परमतत्त्व भगवान का जो ज्ञान हुआ... आहाहा! वह ज्ञानी जीव **निरन्तर अभिमुखरूप से (-आत्मसंमुखरूप से)...** आहाहा! जिसने सम्यग्दर्शन में आत्मसन्मुख पर्याय की है। आहाहा! मिथ्यादर्शन है, वह आत्मा से विमुख और राग तथा विकार के सन्मुख होकर मिथ्यात्व सेवन किया है। आहाहा! उसे छोड़कर जिसने आत्मा के अभिमुख परिणाम किये हैं। आहाहा! है?

परमतत्त्वज्ञानी जीव निरन्तर अभिमुखरूप से (-आत्मसन्मुखरूप से) अटूट (-धारावाही) परिणामसंतति द्वारा... आहाहा! शब्द तो शब्द है न! रामबाण है। जैसे राम का बाण फिरे नहीं, वैसे यह बाण फिरे नहीं। आहाहा! परमतत्त्वज्ञानी जीव। शास्त्र को

पढ़नेवाला, ऐसा नहीं कहा तथा पुण्य-पाप को जाननेवाला, ऐसा भी नहीं कहा। परमतत्त्वज्ञानी.. आहाहा! उसमें पुण्य-पाप आदि नहीं, ऐसा उसमें ज्ञान आ जाता है। परन्तु **परमतत्त्वज्ञानी जीव निरन्तर अभिमुखरूप से...** आहाहा! निरन्तर स्व के-स्वभाव के सन्मुख, स्वभाव के सन्मुख **परिणामसंतति द्वारा...** परिणामस्वभाव की संतति द्वारा, स्वभाव के सन्मुख द्वारा, परिणाम की संतति द्वारा अर्थात् परिणाम का प्रवाह स्वभाव सन्मुख बहा ही करता है। आहाहा! राग से और निमित्त से उपयोग हटकर, उपयोग सतत निरन्तर स्वभाव के अभिमुख वर्तता हुआ.. आहाहा! **साक्षात् स्वभावस्थिति में...** ऐसी परिणामसंतति द्वारा निर्मल स्वभाव की पर्याय द्वारा **साक्षात् स्वभावस्थिति में—आत्मा की आराधना में—वर्तता है,...** आहाहा! बापू! बहुत सूक्ष्म बातें, भाई!

आत्मा अन्दर वस्तु महा भगवान, उसके सन्मुख वर्तता हुआ। उसके सन्मुख वर्तता हुआ। राग और पर्याय से विमुख होता हुआ। आहाहा! अरे! पंचम काल के सन्त ऐसी बातें करें! पंचम काल तो हल्का काल कहलाता है और उसके प्राणी भी हल्के कहलाते हैं, ऐसा नहीं, प्रभु! हल्का नहीं। वह जीव तो भगवानस्वरूप है। त्रिकाल वह भगवानस्वरूप है। किसी काल वह परमात्मा स्वयं निर्बल और दरिद्र हुआ ही नहीं। अनन्त गुण का धारक सधन-लक्ष्मीवाला वह है। आहाहा!

दुनिया से सब उल्टा है। आहाहा! जिस रास्ते से संसार, उसे रास्ते से मोक्ष नहीं है। जिसे रास्ते से मोक्षमार्ग, उस रास्ते से संसार नहीं है। आहाहा! बाहर का यह सब छोड़कर... आहाहा! बड़ी दुकान हो, पाँच-पाँच दस-दस लाख रुपये के मखमल का गलीचा बिछाया हो। आहाहा! एक बार कहा था न? मुम्बई में है। पाँच-छह करोड़ रुपये हैं। एक मणिभाई हैं। अपने यहाँ आते हैं। उनकी... क्या कहलाती है? उनके पास पाँच-छह करोड़ रुपये हैं। उसे क्या कहते हैं? अरबस्तान में दुकान है। आमदनी बहुत है। पश्चात् उसने आहार करने शाम को आमन्त्रण दिया था। आहार करने गये थे परन्तु मकान में कमरे इतने सब, उसमें सर्वत्र मखमल बिछाया हुआ। पाँच लाख रुपये का तो मखमल बिछाया होगा। मुझे तो देखकर ऐसा लगा कि अरे रे! इसमें से निकलना इसको मुश्किल पड़ेगा। आहाहा! ऐसे में से निकलना.. आहाहा! देह से छूटने के काल में हाय.. हाय.. मुझे कोई रखो, मुझे कोई मदद करो। डॉक्टर कहता है परन्तु उसमें हमारा अभी कुछ चले ऐसा

नहीं है, भाई! हाथ धो डालता हूँ। आहाहा! और डॉक्टर ऐसा कहता है कि हाथ धो डालता हूँ, वहाँ तो अन्दर शोर मचाये, हाय.. हाय.. अब मैं नहीं बचूँगा तब? तू तो त्रिकाल बचा हुआ ही है। आहाहा! उस बचे हुए पर तेरी दृष्टि नहीं है, प्रभु! आहाहा! इस शरीर और राग पर दृष्टि है। आहाहा!

इसलिए उसे छोड़कर **साक्षात् स्वभावस्थिति में—आत्मा की आराधना में—वर्तता है,...** आहाहा! प्रतिक्रमण की व्याख्या चलती है। आत्मा की आराधना। शुद्धस्वरूप प्रभु के सन्मुख होकर उसकी आराधना में वर्तता है। आहाहा! अरे! ऐसा मार्ग! **वह निरपराध है। आत्मा की आराधना में—वर्तता है, वह निरपराध है।** और राग में वर्तता है-चाहे तो दया, दान, भक्ति का राग हो, वह अपराध है, अपराध है। आहाहा!

पुरुषार्थसिद्धि-उपाय में अमृतचन्द्राचार्य ने तो ऐसा कहा कि पर की दया का भाव, वह तेरी हिंसा है। क्योंकि पर की दया का भाव राग है। राग, वह तेरी हिंसा है। आहाहा! यहाँ तो (ऐसा लोग कहते हैं) दया पालो तो धर्म होगा। 'दया वह सुख की बेलड़ी दया वह सुख की खान, अनन्त जीव मुक्ति गये...' ऐसी बातें करते हैं, अरे! प्रभु! कौन सी दया? पर की या इसकी? आहाहा! यह अनन्त आनन्द का नाथ, इसकी दया तो पाल। यह इतना जैसा है, उतना मान, तब इसकी दया पाली कहलायेगी। जितना है और जैसा है, वैसा न माने तो इसकी हिंसा की कहलायेगी। आहाहा! है न? ८४ है न? पृष्ठ फिर गया है।

आत्मा की आराधना में—वर्तता है, वह निरपराध है। जो आत्मा के आराधन रहित है,... आत्मा के आराधनरहित है, **वह सापराध है;...** अपराधी है। अपने में रहा है, वह निरपराध है। है? **आत्मा की आराधना में—वर्तता है, वह निरपराध है।** भगवान आनन्द और ज्ञानस्वरूप में वर्ते, वह निरपराध है और आत्मा की आराधनारहित—चाहे तो दया, दान, भक्ति के परिणाम वर्ते और स्वभाव में से हट जाए, वह सापराध है। आहाहा! अब ऐसा कठिन। अब यहाँ तो निवृत्ति मिले नहीं, अभी धन्धे के कारण निवृत्ति नहीं मिलती। उसे कहे कि तेरे पुण्य परिणाम, वे भी अपराध हैं। आहाहा! उसमें है या नहीं? पढ़ा नहीं परन्तु कभी वहाँ। आहाहा!

दो बातें की हैं। आनन्दस्वरूप, ज्ञानस्वरूप शुद्धस्वरूप पवित्र चिद्घन, उसमें जो

वर्तता है पर्याय में वह निरपराधी जीव है। वह मोक्षमार्ग में है। उसका अल्प काल में मोक्ष होगा। और **जो आत्मा के (शुद्धस्वरूप में) आराधन रहित है,...** राग और पुण्य के परिधान को आराधता है, वह प्राणी सापराधी है, अपराधी है। आहाहा! इन पैसेवालों को यह सब क्या करना? आहाहा! यह पैसावाला है कब? 'एक वाला' निकले तो दुःख होता है। पैर में वह वाला नहीं (होता)। पानी में वाला आता है न? चिल्लाहट मचाता है। यहाँ तो स्त्रीवाला, पुत्रवाला, पैसेवाला, मकानवाला, इज्जतवाला,... कितनेवाला? तुझे कितने 'वाला' लगे हैं? आहाहा! प्रभु! क्या हुआ यह? अरे रे! तूने तेरा क्या बिगाड़ा?

जो आत्मा के आराधन रहित है, वह सापराध है;... वह गुनहगार है। आहाहा! चाहे तो वह पुण्य-पाप में वर्ते तो वह गुनहगार है, ऐसा कहते हैं। आहाहा! इतने सब जाना, कुछ दूसरा रास्ता नहीं? परन्तु रास्ता तो जो होगा, वह होगा या दूसरा रास्ता होगा? आहाहा! भगवान ज्ञानस्वरूप आनन्द का दल, उसके आनन्द में वर्तना, वह निरपराधी दशा है, निर्दोष दशा है, वह मोक्षमार्ग की दशा है और निरपराधी प्रभु, राग में, पुण्य में वर्ते.. आहाहा! उदारता... अपने स्वरूप को छोड़कर और जो स्वरूप में नहीं है, ऐसे राग और दया, दान, व्रत, भक्ति में वर्ते, वह गुनहगार है। अरे! इसमें वाद-विवाद करना कहाँ? पार आवे? आहाहा!

वह सापराध है; इसीलिए निरवशेषरूप से विराधन छोड़कर.... इस कारण से अपराध है, उसे बिल्कुल छोड़ दे। पुण्य का एक कण हो, राग का निरविशेष—कुछ भी बाकी रखे बिना, विराधना हो, वह छोड़ दे। आहाहा! है? **इसीलिए निरवशेषरूप से...** कुछ बाकी रखे बिना। कुछ भी राग करूँ तो मदद होगी, कुछ पुण्य करूँ तो, व्यवहार करूँ तो कुछ निश्चय में जाया जाएगा, ऐसा छोड़ दे। **निरवशेषरूप से विराधन छोड़कर—ऐसा कहा है। जो परिणाम 'विगतराध' अर्थात् राध रहित है, राध=आराधना...** रहित है। नीचे अर्थ है। वह विराधक है। विराधन है। उस विराधनरहित निरपराध है। **जीव निश्चयप्रतिक्रमणमय है, इसीलिए उसे प्रतिक्रमणस्वरूप कहा जाता है।**

विशेष कहेंगे.... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)